LEARN GEETA
तस्मात् योगी भवार्जुन

॥ श्रीहरिः ॥
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 6: आत्मसंयमयोग

2/4 (श्लोक 11-23), शनिवार, 05 जुलाई 2025

विवेचक: गीता विशारद श्री श्रीनिवास जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/WgzMOMX0cJ8

ध्यानयोग का स्वरूप

भारत माता के गीत, श्री हनुमान चालीसा, सरस्वती वन्दना के साथ दीप प्रज्वलन करके आज के सत्र का आरम्भ हुआ।

आज के अध्याय छ: आत्मसंयमयोग का विवेचन करते हुए, जीवन परम धन्य होने का अनुभव हो रहा है, क्योंकि आज का विवेचन हिमालय के पास, गङ्गातट पर, परमपूज्य स्वामीजी के श्रीसानिध्य में, ऋषिकेश से सब गीता प्रेमियों को दे रहे हैं।

अध्याय छ: श्री ज्ञानेश्वर माउली का अत्यन्त प्रिय अध्याय है। अध्याय पाँच में अर्जुन ने भगवान् श्रीकृष्णजी से एक प्रश्न किया था-

अर्जुन उवाच
सन्न्यासं(ङ्) कर्मणां(ङ्) कृष्ण, पुनर्योगं(ञ्) च शंससि।
यच्छ्रेय एतयोरेकं(न्), तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम्॥5.1॥

अर्जुन ने पूछा संन्यासी और योगी दोनों में श्रेष्ठ कौन हैं?

पिछले विवेचन में हमने देखा की संन्यासी और योगी बहिरङ्ग में भले ही भिन्न प्रतीत होते हों पर अंतरङ्ग में दोनों एक ही होते हैं।

श्रीभगवानुवाच
अनाश्रितः(ख्) कर्मफलं(ङ्), कार्यं(ङ्) कर्म करोति यः।
स सन्न्यासी च योगी च, न निरग्निर्न चाक्रियः॥6.1॥

योगारूढ़ कैसे हुआ जाए? यह भी हमने देखा था। योगारुढ व्यक्ति में क्या लक्षण दिखते है? समत्व कैसे आता है ?

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा, कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
युक्त इत्युच्यते योगी, समलोष्टाश्मकाञ्चनः॥6.8॥

हमने यह भी देखा कि इन्द्रियों पर विजय कैसे प्राप्त की जाती है। जब समत्व आ जाता है तो उसे युक्तयोगी कहा जाता है। जब ऐसा होता है तो योगी का मन केवल प्रभु की भक्ति में ही रमता है, उसे एकान्त प्रिय लगने लगता है।

दूसरे अध्याय के पाँचवें श्लोक में अर्जुन श्रीभगवान् को कहते हैं कि मुझे ऐसा लगता है कि सब छोड़ कर संन्यास लेना युद्ध से ज्यादा उपयुक्त होगा। भले ही मुझे भिक्षा माँग कर निर्वाह करना पड़े, तो भी कल्याणकारी होगा।

अर्जुन की मनःस्थिति समझकर भगवान् श्रीकृष्ण उन्हें सब समझा रहे हैं कि यह सब इतना आसान नहीं होता। योगी ध्यान करता है, जिसके लिए उसे यम, नियम आदि सोपानों से होकर जाना पड़ता है। बहुत कठिन तप करना पड़ता है।

जो व्यक्ति योग-शिखर तक पहुँच जाता है वह ध्यान किस प्रकार से करता है? यह, श्रीभगवान् आगे के श्लोकों में अर्जुन को समझा रहे हैं।

योगी युञ्जीत सततम्, आत्मानं(म्) रहसि स्थितः।
एकाकी यतचित्तात्मा, निराशीरपरिग्रहः॥6.10॥

उसने अपनी इन्द्रियों, मन, चित्त को वश में कर लिया है, निरपेक्ष, अपेक्षा रहित हो गया है और वस्तुओं के सङ्ग्रह को त्याग दिया है। जब समत्व प्राप्त कर व्यक्ति योगारूढ़ हो जाता है तो उस ध्यान की उच्चतम अवस्था प्राप्त करने के लिए कैसे स्थान पर बैठना चाहिए? इन सब बातें श्रीभगवान् आगे बता रहे हैं।

6.11

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य, स्थिरमासनमात्मनः।
नात्युच्छ्रितं(न्) नातिनीचं(ञ्), चैलाजिनकुशोत्तरम्॥11॥

शुद्ध भूमि पर, (जिस पर क्रमशः) कुश, मृगछाला और वस्त्र बिछे हैं, (जो) न अत्यन्त ऊँचा है (और) न अत्यन्त नीचा, (ऐसे) अपने आसन को स्थिर स्थापन करके।

विवेचन- योगारूढ़ योगी के ध्यान का स्थान शुचिर् होना चाहिये। शुचिता व्यापक शब्द है जिसमें स्वच्छता, शुद्धता और पवित्रता समाहित है।

सन्त श्री ज्ञानेश्वर् महाराज जी इसके लिए कहते हैं-

जो संतीं वसविला ठावो। संतोषासि सावावो।
मना होय उत्सावो। धैर्याचा।।

किसी सन्त महात्मा ने उस स्थान पर निवास, साधना की हो।
गङ्गा मैया ने एक बार श्रीभगवान् से पूछा कि हजारों, लाखों भक्तगण नित्य अपने पापों को धोने के लिए मुझ में स्नान करते हैं। आप बताइए की मैं स्वयं को इन पापों से पवित्र करने के लिए क्या करुँ? श्रीभगवान् बोले कि जो भी सन्त महात्मा तुम्हारे अन्दर स्नान करेगा तो उनके प्रभाव से, हे गङ्गे तुम्हारे जल के ये सब पाप धुल जायेंगे। इस प्रकार सन्तों की पवित्रता होती है। सन्तों द्वारा पवित्र किया हुआ स्थान ध्यान के लिए उपयुक्त होता है। ऐसा स्थान जहाँ से कोई पाखण्डी व्यक्ति भी प्रवास करे तो उसको वहाँ पर थोड़ी देर और रुकने की इच्छा हो जाए। ऐसा स्थान जहाँ मन्द पवन बहती हो, धूप भी शीतल हो। ऐसे पवित्र स्थान पर दृढ़ आसन लगाकर योगी को बैठना चाहिए।

उसका आसन कैसा हो?

आसन स्थिर और सुखदायक हो। आसन ऐसा हो जिस पर सुख के साथ योगी तीन, चार घण्टे बैठ सके।

महर्षि पतञ्जलि ने अपने योगसूत्र में कहा है कि विभिन्न योगासनों के प्रभाव से शरीर को ध्यान में बैठने योग्य बनाया जा सकता है। आत्मसयंम से स्थूल से सूक्ष्म तक जाया जाता है। शरीर पर, फिर इन्द्रियों, मन, बुद्धि को भी वश में किया जाता है। ऐसा आसन न तो ज्यादा उपर, न ही ज्यादा नीचे होना चाहिए, समत्व में स्थित होना चाहिए।

आसन मृगचर्म का, उसके ऊपर कुश का और उसके ऊपर कपड़े का आसन होना चाहिए। इसके उपर ध्यानात्मक आसन लगाकर स्थिर ध्यान में बैठना चाहिए। प्राकृतिक मृत्यु प्राप्त मृग का चर्म ही योगी लेता है।

ध्यान के लिये पद्मासन, गौमुखासन या स्वस्तिकासन या अन्य कोई भी उपयुक्त आसन लगाकर योगी स्वयं को प्रतिष्ठित करता है।

6.12

तत्रैकाग्रं(म्) मनः(ख्) कृत्वा, यतचित्तेन्द्रियक्रियः।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्, योगमात्मविशुद्धये॥12॥

उस आसन पर बैठकर चित्त और इन्द्रियों की क्रियाओं को वश में रखते हुए मन को एकाग्र करके अन्तःकरण की शुद्धि के लिये योग का अभ्यास करे।

विवेचन- मन को ध्येय पर स्थिर लगाना है। ध्येय यानि जिसका चिन्तन किया जाता है। ध्येय पर मन को एकाग्र करने को धारणा कहते हैं।

जैसे लोग भगवान् राम का चिन्तन करते हैं। धारणा से चित्त की शुद्धि होती है। कर्मयोग से भी चित्त की शुद्धि ही होती है इसलिये श्रीभगवान् कहते हैं योग, धारणा, ध्यान से चित्त की शुद्धि होती है।
योग से जीवन की और व्यक्ति के व्यक्तित्व की शुद्धि होती है।

6.13

समं(ङ्) कायशिरोग्रीवं(न्), धारयन्नचलं(म्) स्थिरः।
सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं(म्) स्वं(न्), दिशश्चानवलोकयन्॥13॥

काया, शिर और ग्रीवा को सीधे अचल धारण करके तथा दिशाओं को न देखकर (केवल) अपनी नासिका के अग्रभाग को देखते हुए स्थिर होकर (बैठे)।

विवेचन- ध्यान के लिए मनुष्य को कैसे बैठना चाहिए?
यह भी भगवद्गीता हमें सिखाती है।

श्रीभगवान् कहते है, ध्यान के लिए बैठते समय पीठ, मेरुदण्ड और गर्दन एक सीधी रेखा मे होने चाहिएं। यह वैज्ञानिक रूप से भी ठीक है क्योंकि इससे मेरुदण्ड में बहने वाला द्रव (fluid) जिसमे व्याप्त तन्त्रिकाएँ तरङ्गों को मूलाधार से मस्तिष्क तक लेकर जाती हैं।

मराठी में कहते है, '**पाठ वाकली तर पाठ होत नाही**', पढ़ाई करते समय, पीठ मुड़ी तो याद नहीं होता है।

अब अचल हो कर, बिना हलचल के बैठना है।

गीता साधना शिविर में ऋषिकेश में स्वामीजी के मार्गदर्शन में प्रतिदिन साधक ध्यान करते हैं।

ध्यान का अभ्यास समूह में हो सकता है पर ध्यान साधना तो एकान्त में ही होती है।

इधर-उधर ध्यान न देते हुए, अपनी नासिकाग्र पर अपनी दृष्टि केन्द्रित करते हुए, अर्धोन्मिलित (आधी खुली) आँखो से देखना है।

6.14

प्रशान्तात्मा विगतभी:(र्), ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनः(स्) संयम्य मच्चित्तो, युक्त आसीत मत्परः॥14॥

जिसका अन्तःकरण शान्त है, जो भयरहित है और जो ब्रह्मचारिव्रत में स्थित है, (ऐसा) सावधान ध्यान-योगी मन का संयम करके मेरे में चित्त लगाता हुआ मेरे परायण होकर बैठे।

विवेचन- उस योगी को **ब्रह्मचारिव्रते स्थितः**, ब्रह्मचारी व्रत का पालन करना है। योगी केवल श्रीभगवान् का चिन्तन करता रहता है। उसके मन में विषय-सुख आते भी नहीं, यह ब्रह्मचर्य व्रत है।

ब्रह्मचारी को अपने अभ्यास, योग पर स्वयं का ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है। उसके मन में कोई भय नहीं रहता तो वह सरलता से योग कर पाता है। भय, रोग का, कुल के नाम खराब होने का, सम्पत्ति छिन जाने का, ज्ञान में परास्त होने का, रूपवान को बुढ़ापे का, ऐसे न जाने कितने भय मनुष्य को सताते रहते हैं। योगारूढ़ योगी निर्भय होता है। योगी का चित्त अब पूर्ण रूप से शान्त हो गया है।

योगी को अपने मन को संयमित करना है। मच्चित्तो, मन ईश्वर-चिन्तन निरन्तर करता जायेगा तो उसका चित्त स्थिर होने लगता है। परमात्मा घनीभूत हो कर साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण के रूप में अवतरित हुए हैं। योगी श्रीभगवान् को ही अपना केन्द्र-बिन्दु बना लेता है। परिक्रमा करते समय हम श्रीभगवान् को अपने जीवन का केन्द्र-बिन्दु बनाते हैं।

चित्त को सावधान करके, युक्त करके, परमात्मा में लगा कर योगी क्या करता है?

6.15

युञ्जन्नेवं(म्) सदात्मानं(म्), योगी नियतमानसः।
शान्तिं(न्) निर्वाणपरमां(म्), मत्संस्थामधिगच्छति॥15॥

वश में किये हुए मन वाला योगी मन को इस तरह से सदा (परमात्मा में) लगाता हुआ मुझमें सम्यक् स्थिति वाली (जो) निर्वाण परम शान्ति है, (उसको) प्राप्त हो जाता है।

विवेचन- अब मन योगी के नियन्त्रण में है। इस प्रकार योगारूढ़ योगी को सदा, निरन्तर यथाशक्ति, प्रतिदिन करना चाहिए।

नागपुर के योगाचार्य जनार्दन स्वामी जी कहते थे, जीवन में समाधान, योग, निरोगी अवस्था यदि प्राप्त करनी है तो योग का यथाशक्ति, निरन्तर अभ्यास करना चाहिए।

हमें श्रीभगवान् में अपने चित्त को सदैव लगा कर रखना है। इससे हमें परम शान्ति प्राप्त होती है।

हम सुख प्राप्ति, शान्ति के लिए ही तो करते हैं। हमारी असीमित सुखों की लालसा से हमें वह शान्ति, परम शान्ति नहीं मिलती। योग से मन शान्त होता है।

यह योग किसको प्राप्त नहीं हो सकता है यह आगे देखते हैं।

6.16

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति, न चैकान्तमनश्नतः।
न चातिस्वप्नशीलस्य, जाग्रतो नैव चार्जुन॥16॥

हे अर्जुन ! (यह) योग न तो अधिक खाने वाले का और न बिलकुल न खाने वाले का तथा न अधिक सोने वाले का और न (बिलकुल) न सोने वाले का ही सिद्ध होता है।

विवेचन- यह योग उसे प्राप्त नहीं हो सकता जो अति खाता है या कुछ भी नहीं खाता है उसे भी योग सिद्ध नहीं हो सकता। अति निद्रा लेने वाला, अति स्वप्नशील भी योग को प्राप्त नहीं कर सकता। जो अति जागरण करता है उसे भी नहीं। किसी भी अति वालों के लिए योग नहीं है।

योग किसे सिद्ध होता है?

क्या आहार-विहार हो, ये श्रीभगवान् आगे बताते हैं।

6.17

युक्ताहारविहारस्य, युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य, योगो भवति दुःखहा॥17॥

दुःखों का नाश करने वाला योग (तो) यथायोग्य आहार और विहार करने वाले का, कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करने वाले का (तथा) यथायोग्य सोने और जागने वाले का ही सिद्ध होता है।

विवेचन- युक्त (optimum) अर्थात् योग्य (balanced) आहार। प्रत्येक इन्द्रिय का एक विषय है। सभी इन्द्रियों के आहार सन्तुलित होने चाहिये।

विहार (activities) भी सम प्रमाण में होना चाहिए।

दिनभर केवल काम ही काम करने वाला व्यक्ति (workaholic), थकान के कारण योग नहीं कर सकता। कार्य नियन्त्रण में करना ही ठीक होता है।

युक्त-
जितनी उम्र के और काम के अनुरूप आवश्यक होता है, उतनी ही निद्रा, उतना ही भोजन, उतना ही विहार, उतना ही काम हो तो व्यक्ति योगयुक्त हो सकता है।

मनुष्य को आधा पेट ही भोजन करना चाहिये उसमें 1/4 पानी और 1/4 वायु का भाग होना चाहिए।

अवबोध अर्थात् जाग्रत अवस्था में क्या करना ये चिन्तन। योग से मनुष्य के दुःखों का हरण होता है।

अब आगे योग में कैसे बैठना है? ये प्रभु बता रहे हैं।

6.18

यदा विनियतं(ञ्) चित्तम्, आत्मन्येवावतिष्ठते।
निःस्पृहः(स्) सर्वकामेभ्यो, युक्त इत्युच्यते तदा॥18॥

वश में किया हुआ चित्त जिस काल में अपने स्वरूप में ही स्थित हो जाता है (और) (स्वयं) सम्पूर्ण पदार्थों से निःस्पृह (हो जाता है), उस काल में (वह) योगी है - ऐसा कहा जाता है।

विवेचन- यहाँ युक्त से तात्पर्य है योगी। यह चित्त अब अपने आप योगी के नियन्त्रण में आ गया है। विनियतम्, अब चित्त को नियन्त्रित करना नहीं पड़ता, अब वह स्वयं ही नियन्त्रण में रहता है।

अब उसका चित्त केवल आत्मा, परमात्मा में ही लगा रहता है। निःस्पृहः, उसे अब ईश्वर प्राप्ति के अपने ध्येय के सिवा और कोई चाह नहीं, उसे अब स्वयं के लिये कुछ भी इच्छा शेष नहीं रह गयी है।

जब योगी इस अवस्था में आ जाता है, तब **युक्त इत्युच्यते तदा,** उसे योग परिपूर्ण कहा जाता है। अब उसे इच्छा तो क्या उसका स्मरण तक नहीं होता। वह **निःस्पृहः(स्) सर्वकामेभ्यो** हो जाता है।

6.19

यथा दीपो निवातस्थो, नेङ्गते सोपमा स्मृता।
योगिनो यतचित्तस्य, युञ्जतो योगमात्मनः॥19॥

जैसे स्पन्दन रहित वायु के स्थान में स्थित दीपक की लौ चेष्टा रहित हो जाती है, योग का अभ्यास करते हुए वश में किए हुए चित्त वाले योगी के चित्त की वैसी ही उपमा कही गयी है।

विवेचन- यहाँ श्रीभगवान् एक उपमा दे कर इस चित्त की अवस्था को समझाते हैं।

सन्त ज्ञानेश्वर महाराज इसके लिए बहुत सुन्दर बात कहते हैं-
ये मन जो विषयों के चिन्तन के कारण सर्वदा विचलित रहता है वो संजो करके जैसे हृदय के अन्दर रख दिया हो, ऐसी अवस्था में योगी पहुँच गया है।

श्रीभगवान् कहते है, मन्दिर में रखे दीपक की ज्योति जिस प्रकार वायु न लगने से स्थिर रहती है, **यथा दीपो निवातस्थो, नेङ्गते**, ध्यान करने वाले योगी का चित्त भी इसी अवस्था में आ जाता है। **उसका चित्त विषयों से विचलित नहीं होता।**

जैसे चित्त की अवस्थाएँ बताई है, मूढ़, क्षिप्त, विक्षिप्त, एकाग्र। अब योगी का चित्त अगली अवस्था, निरुद्ध में जाता है।

6.20

यत्रोपरमते चित्तं(न्), निरुद्धं(म्) योगसेवया।
यत्र चैवात्मनात्मानं(म्), पश्यन्नात्मनि तुष्यति॥20॥

योग का सेवन करने से जिस अवस्था में निरुद्ध चित्त उपराम हो जाता है तथा जिस अवस्था में (स्वयं) अपने आप से अपने आपको देखता हुआ अपने आप में ही सन्तुष्ट हो जाता है।

विवेचन- श्रीभगवान् बताते हैं, अब इतनी योग-सेवा करने के बाद योगाभ्यासी का चित्त निरुद्ध हो गया है।

मूढ़-

जिसे न स्वयं का न ही उसके आस-पास के वातावरण की ही उसे सुध है- जैसे कि पेड़-पौधे। क्षिप्त यानी चञ्चल जो क्षण भर भी स्थिर नहीं। विक्षिप्त, जिसका चित्त अभ्यास से कुछ क्षणों के लिए स्थिर हो जाता है। फिर आता है एकाग्र जिसे केवल ध्येय ही दिखता है।

अब चित्त की अगली अवस्था है, निरुद्ध। पतञ्जलि मुनि ने योग को, **योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः** कहा है। चित्त की वृत्तियों का निरोध, बन्द हो जाना ही योग है।

चित्त की स्थिर अवस्था। ऐसा चित्त जब उसमें परमात्मा ही रम् जाते हैं तो फिर उस स्थिति में जाकर वह क्या देखता है? उसे परमात्मा दिखता है। अब वह पूर्णतः परमात्मा में ही रम जाता है।

हम कहाँ स्थित रहते हैं?

जहाँ हमारा चित्त रहता है, हम वहाँ रहते हैं, जहाँ हमारा शरीर रहता है वहाँ नहीं रहते। वह परमात्मा में ही आत्मरूप हो गया है। उसका चित्त परमात्मा में ही स्थिर रहता है, वह योगी स्वयं भी परमात्मा स्वरूप बन जाता है। उसे आनन्द, सन्तुष्टि, सच्चिदानन्द का अनुभव होता है।

हम जैसे सामान्य व्यक्तियों के मन में प्रश्न उठ सकता है कि ये सब योगाभ्यास कर के क्या होगा? हम निष्काम कर्म की सोच ही नहीं सकते। हर काम में फल कि अपेक्षा रखते हैं। श्रीभगवान् जानते हैं इसलिये बिना पूछे ही आगे बताते हैं।

6.21

सुखमात्यन्तिकं(म्) यत्तद्, बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्।
वेत्ति यत्र न चैवायं(म्), स्थितश्चलति तत्त्वतः॥21॥

जो सुख आत्यन्तिक, अतीन्द्रिय (और) बुद्धिग्राह्य है, उस सुखका जिस अवस्था में अनुभव करता है और (जिस सुख में) स्थित हुआ यह ध्यानयोगी तत्त्व से फिर (कभी) विचलित नहीं होता।

विवेचन- उस योगी को कल्पना के बाहर का अत्यन्तिक-सुख प्राप्त होता है। यह अतीन्द्रिय-सुख होता है जो इन्द्रियों से नहीं अपितु बुद्धि से प्राप्त होता है, **बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्**। उस तत्त्व का भाव सच्चिदानन्द हैं। योगी इसी भाव को प्राप्त कर लेता है। जहाँ से ये अतीन्द्रिय-सुख प्राप्त हो जाता है फिर योगी वहाँ से हिलता ही नहीं है। यह वही जान सकता है जो स्वयं परमात्मा के साथ एकरूप हो गया हो।

6.22

यं(म्) लब्ध्वा चापरं(म्) लाभं(म्), मन्यते नाधिकं(न्) ततः।
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन, गुरुणापि विचाल्यते॥22॥

जिस लाभ की प्राप्ति होने पर उससे अधिक कोई दूसरा (लाभ) (उसके) मानने में भी नहीं आता और जिसमें स्थित होने पर (वह) बड़े भारी दुःख से भी विचलित नहीं किया जा सकता।

विवेचन- जिस सुख को योगी प्राप्त कर लेता है, उस सुख से अधिक कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता यह योगी जानता है।

वह योगी अन्तरङ्ग से तो परमात्मा के साथ एकरूप हो गया है पर बहिरङ्ग से इस संसार में रहता है। इस संसार के बाहरी सुख-दुःख उसको लगे रहते है। इस स्थिति में आने के उपरान्त योगी जानता है कि इससे अधिक कुछ नहीं हो सकता। **जिस स्थिति में वह स्थिर हो गया है तो अब बड़े से बड़ा दुःख ही उस पर क्यों न आ जाए, वह विचलित नहीं होता।**

हमारे योगियों पर ऐसे कितने ही दुःख आए। स्वातन्त्र्य-वीर सावरकर जी को बैल की जगह तेल निकालने वाले कोल्हू से जोड़ा गया पर वो विचलित नहीं हुए। वे काव्य रचना करते रहे-

वर्षो कि श्री तुझ्या, ती पुष्प राशि कि कोसळो संकटो शैल राशि।

ऐसे योगियों पर फूलों की वर्षा हो या सङ्कटो के पहाड़ ही टूट पड़े, वे कभी भी विचलित् नहीं होते।

इसलिये श्रीभगवान् अर्जुन को आज्ञा देते हैं और हम सभी को भी बतलाते हैं।

6.23

तं(म्) विद्याद् दुःखसंयोग, वियोगं(म्) योगसञ्ज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो, योगोऽनिर्विण्णचेतसा॥23॥

जिसमें दुःखों के संयोग का ही वियोग है, उसी को 'योग' नाम से जानना चाहिये। (वह योग जिस ध्यानयोग का लक्ष्य है,) उस ध्यानयोग का अभ्यास न उकताये हुए चित्त से निश्चयपूर्वक करना चाहिये।

विवेचन- श्रीभगवान् यहाँ योग की व्याख्या करते हैं- दुःख के संयोग का वियोग करनेवाला जो है, उसका नाम योग है।

दुःख तो आता है पर योगी पर उसका कोई प्रभाव नहीं होता। दुःखों के पहाड़ भी टूट पड़े तो योगी उन दुःखों को बाहर ही रोक देता है, अपने चित्त तक पहुँचने ही नहीं देता।

श्रीभगवान् ने योग आचरण करने के लिए अर्जुन को बताया। यह केवल अर्जुन को नहीं बताया परन्तु अर्जुन को निमित्त बना कर हम सबको बताया है।

आनन्दमय जीवन यदि व्यतीत करना है तो हमें जीवन में योग का आचरण करना आवश्यक है।

मनुष्य को योग का आचरण कैसे करना चाहिए?
मनुष्य को योग सीख लेना चाहिए पर केवल सीखकर ही काम नहीं चलेगा। श्रीभगवान् कहते है कि अपनी अधिक से अधिक शक्ति लगाकर, योग को दृढ़ निश्चयपूर्वक हर दिन, निरन्तर करने से मनुष्य सुखमय जीवन व्यतीत कर सकता है।

गीता जी का अभ्यास, योगाभ्यास् ही तो है। तो आज का योगाभ्यास उस परमात्मा के चरणों में अर्पण करते हुए आज के विवेचन का समापन हुआ। इसके उपरान्त प्रश्नोत्तर सत्र आरम्भ हुआ।

विचार-मन्थन (प्रश्नोत्तर)

प्रश्नकर्ता- निशा गर्ग जी
प्रश्न- मैं चल-फिर नहीं सकती हूँ। कमरे में ही रहने से मन एकाग्र नहीं होता, ध्यान भटकता है। कुछ उपाय बताइए।
उत्तर- यथाशक्ति योगाभ्यास निरन्तर करना चाहिए। आवश्यक नहीं कि कठिन आसन किए जायें। नित्य प्राणायाम आदि भी कर सकते हैं। इससे चित्त एकाग्र होगा, ध्यान भटकेगा नहीं।

प्रश्नकर्ता- दीप्ति जी
प्रश्न- शास्त्र क्या हैं और कौन से शास्त्र को मानना चाहिए?
उत्तर- कुछ शास्त्रों के बारे में आप सभी जानते हैं। जैसे रसायन-शास्त्र, भौतिक-शास्त्र। रसायन के विषय में जो ज्ञान है वह रसायन-शास्त्र, चिकित्सा के ज्ञान को चिकित्सा-शास्त्र कहते हैं। शास्त्र का अर्थ है विज्ञान। वेदों में जो जीवन के नियम बताए गये

हैं, उनके अनुसार चलना चाहिए। शास्त्रों से कौन सी आयु में किन कार्यों को करना चाहिए ये जानना चाहिए। हमारी गीता जी भी योगशास्त्र हैं।

।। ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु।।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||